वी.नरसिम्हा राजू

बनाम

वी.गुरुमूर्ति राजू और अन्य

(पी॰बी ॰गजेन्द्र गडकर, के॰सी॰दास गुप्ता और रघुवर दयाल)

मध्यस्थता-समझौते का संदर्भ - प्रतिफल अवैधानिक पाया गया - पंचाट की वैधता -आपराधिक मामलों की वापसी पर मध्यस्थता के लिए करार - सार्वजनिक नीति - भारतीय संविदा अधिनियम 1872 (1872 का 9) /.23

एक व्यवसाय के संबंध में जिसे अपीलकर्ता और पहला प्रतिवादी 15 सितंबर 1942 तक अन्य लोगों के साथ से काम चला रहे थे। पहले प्रतिवादी ने मांग की कि खाता बनाना चाहिए और लाभ को भागीदारों के बीच विभाजित किया जाना चाहिए। लाभ को बांटते समय विवाद उत्पन्न हुआ। जहां प्रथम प्रतिवादीने स्वयं के लिए बकाया धन की मांग की वहीं चौथे प्रतिवादी ने मांग की कि उक्त लाभ को आधा-आधा सभी में बांटा जाए। प्रथम प्रतिवादी ने मजिस्ट्रेट न्यायालय में अन्य भागीदारों व अपीलकर्ता के खिलाफ आपराधिक शिकायत दर्ज की जिसमें आरोप लगाया गया कि आरोपी व्यक्तियों ने अपराध अंतर्गत धारा 420, 465, 468 और 477 के साथ 107 और 120 बी भादंसं.के तहत अपराध किया है। प्रथम प्रतिवादी ने आरोप लगाया fd साझेदारी के खातों को दिखाने के लिए बदल दिया गया कि चौथा प्रतिवादी पहले प्रतिवादी के साथ समान रुप से लाभ

साझा करने का हकदार था। शिकायत पर कंपलेण्टट के खिलाफ नोटिस जारी किये गये और मामले की सुनवायी 30 दिसंबर 1943 तक के लिए स्थगित कर दी गई । उस तारीख् को प्रथम प्रतिवादी और अभियुक्त व्यक्तियों ने समझौता किया जिसके तहत विवाद अपीलकर्ता और अन्य तथा प्रथम प्रतिवादी के बीच पहले एक नामित मध्यस्थ के पास भेजा जाना था। प्रथम प्रतिवादी अपनी आपराधिक शिकायत वापस लेने के लिए सहमत हो रहा है। तदनुसार, शिकायत को प्रथम दृष्टया खारिज कर दिया गया। प्रतिवादी ने अदालत को सूचित किया कि उसके पास कोई सबूत नहीं है। अपने मामले का समर्थन करने के लिए, पार्टियों द्वारा हस्ताक्षरित समझौता किया गया था, जो मध्यस्थ को सौंप दिया गया। उचित समय में मध्यस्थ ने अपना फैसला सुनाया और प्रथम प्रतिवादी को पंचाट के संदर्भ में एक डिक्री पारित करने के लिए कदम उठाए। इसके बाद अपीलकर्ता ने मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के तहत एक आवेदन दायर किया। इस आधार पर पंचाट को रद्द करने के लिए आवेदन दायर किया कि प्रतिफल के लिए मध्यस्थता समझौते पर विचार करना गैर कानूनी था क्योंकि यह पहले प्रतिवादी द्वारा उसके खिलाफ मुकदमा न चलाने का वादा था, जिसमें गैर-शमनयोग्य अपराध शामिल है और,इसलिए, धारा 23 भारतीय संविदा अधिनियम 1872 के तहत समझौता अमान्य था।

माना गया, कि पार्टियों द्वारा मध्यस्थता समझौता दिनांक 30 दिसंबर 1943 को जो निष्पादित किया गया वह भारतीय संविदा

अधिनियम धारा 23 के तहत अमान्य था क्योंकि इसका प्रतिफल सार्वजनिक नीति के विपरीत था। फलस्वरूप पंचाट लागू नहीं किया जा सकता।

भवानीपुर बैंकिंग कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम श्रीमती दुर्गेश नंदिनी दासी, एआईआर 1941 पीसी 95, कामिनी कुमार बसु एवं अन्य. बनाम बीरेंद्र नाथ बसु और अन्य, एलआर। 57 आईए 117 और सुधींद्र कुमार बनाम गणेश चंद्रा (1939)1 कलकत्ता 241 पर आधारित।

सिविल अपील, क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 494 और 495/1957

निर्णय और डिक्री दिनांक 5 मार्च, 1954 उड़ीसा उच्च न्यायालय के विरुद्ध अपील मिसलेनियस अपील संख्या 25 और 26 ऑफ 1949

अपीलकर्ता की ओर से एवी विश्वनाथ शास्त्री और टीवीआर टाटाचारी।

प्रतिवादी नंबर 1 के लिए एमएसके शास्त्री।

22 अगस्त 1962 को न्यायालय द्वारा निर्णय सुनाया गया

गजेंद्रगडकर, जे. द्वारा दिया गया था - इन दो अपीलों में जो संक्षिप्त प्रश्न उठता है वह यह है कि क्या मुचालिका (संदर्भ) जिसे अपीलकर्ता और चार उत्तरदाताओं द्वारा तंगुडा नरसिम्हामूर्ति के पक्ष में निष्पादित किया गया था। 30 दिसंबर, 1943 को किया गया निर्णय अमान्य है क्योंकि इसका प्रतिफल धारा 23 भारतीय lafonk अधिनियम के

तहत सार्वजनिक नीति के विरोध में था। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 23 . ट्रायल कोर्ट और उड़ीसा उच्च न्यायालय दोनों ने इस प्रश्न का नकारात्मक उत्तर दिया है, और अपीलकर्ता, उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए प्रमाण पत्र के साथ इस न्यायालय में आया है। संविधान के अनुच्छेद 133 में तर्क दिया गया है कि उक्त निष्कर्ष विधि के विपरीत है।

कानून के लिए.ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता ने 9 दिसंबर 1940 को एक पंजीकृत लीज-डीड के तहत 1941 से 1944 तक तीन साल के लिए पार्लाकिमेडी समस्थानम राइस एंड ऑयल मिल का पट्टा लिया था। किराया देने की सहमति रुपये 7,000 प्रति वर्ष थी, मिल के कामकाज के लिए, अपीलकर्ता ने छह साझेदारों को अपने साथ लिया और साझेदारी में उनके शेयर विधिवत निर्धारित किए गए। यह साझेदारी चावल की पिसाई और मूंगफली से तेल निकालने का काम करती थी।

अपीलकर्ता ने धान और मूंगफली का एक अन्य व्यवसाय भी किया और इस व्यवसाय में भी उसने चावल की पिसाई और मूंगफली से तेल निकालने के व्यवसाय में अपने छह साझेदारों में से चार को अपने साझेदार के रूप में लिया। इन साझेदारों में प्रतिवादी क्रमांक IV भी था। गुरुमूर्ति राजू यह बाद वाला व्यवसाय मार्च 1942 के अंत तक लगभग 14 महीने तक चलता रहा। इसके बाद दो साझेदार उक्त व्यवसाय से सेवानिवृत्त हो गए और पूंजी और मुनाफे में अपने शेयर ले लिए। शेष तीन साझेदारों ने फर्म का व्यवसाय जारी रखा अपीलकर्ता के पास As.0.7.3 शेयर थे,

प्रतिवादी नंबर 2 के पास 0.6.9 शेयर थे और प्रतिवादी नंबर 1 के साथ प्रतिवादी नंबर 4 के पास 0.2.0 शेयर थे। इस प्रकार, साझेदारी में, वास्तव में, पाँच भागीदार शामिल थे, उत्तरदाता 1 और 4 एक साथ उक्त 0.2.0. हिस्से के हकदार थे। इस प्रकार इन साझेदारों द्वारा साझेदारी का कारोबार 15 सितंबर, 1942 तक चला। तब प्रतिवादी नंबर 1 ने मांग की कि हिसाब-किताब बनाया जाए और लाभ को साझेदारों के बीच बांटा जाए। इस माँग के परिणामस्वरूप, साझेदारी रोक दी गई, हिसाब-किताब किया गया और मुनाफ़ा बाँट दिया गया। अपीलकर्ता और प्रतिवादी नंबर 2 ने अपनी-अपनी राशि ले ली, लेकिन प्रतिवादी नंबर 1 ने अकेले अपने लिए और प्रतिवादी नंबर 4 के लिए देय राशि का दावा किया, जबकि प्रतिवादी नंबर 4 ने मांग की कि उक्त राशि को आधा-आधा बांट दिया जाए। वह और प्रतिवादी नंबर 1. इस तरह प्रतिवादी नंबर 1 की हिस्सेदारी को लेकर विवाद खड़ा हो गया.

इसके बाद प्रतिवादी नंबर 1 ने अपीलकर्ता सहित छह लोगों के खिलाफ बरहामपुर में संयुक्त मजिस्ट्रेट की अदालत में आपराधिक शिकायत दर्ज की। इस शिकायत में उन्होंने आरोप लगाया कि छह आरोपियों ने धारा 420, 465, 468 और 477 व धारा 107 और 120-बी भा.दं.स. के तहत अपराध किया है। इस प्रकार प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा लगाए गए आरोप का सार यह था कि साझेदारी के खातों को धोखाधड़ी से यह दिखाने के लिए बदल दिया गया था कि प्रतिवादी नंबर 4, प्रतिवादी

नंबर 1 के साथ समान रूप से लाभ साझा करने का हकदार था। इन कार्यवाहियों में, प्रतिवादी नंबर 1 ने अपीलकर्ता द्वारा अपने भागीदारों के साथ किए गए दो व्यवसायों की खाता-बही की कुर्की प्राप्त की। इस आपराधिक शिकायत को 1943 के आपराधिक मामले संख्या 139 के रूप में क्रमांकित किया गया था और इस पर प्रक्रिया जारी होने और कुछ प्रारंभिक कदम उठाए जाने के बाद, इसे 30 दिसंबर, 1943 तक सुनवाई के लिए स्थगित कर दिया गया था।

30 दिसंबर, 1943 को, प्रतिवादी नंबर 1 और आरोपी व्यक्तियों ने एक समझौते (प्रदर्श लिखा गया जिसके परिणामस्वरूप अपीलकर्ता और अन्य और प्रतिवादी नंबर 1 के बीच विवाद को श्रीमान मूर्ति की मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने पर सहमति हुई। प्रतिवादी नंबर 1 पर अपनी आपराधिक शिकायत वापस लेने की सहमति पर। तदनुसार, जब उस तारीख को आपराधिक मामला सुनवाई के लिए बुलाया गया, तो प्रतिवादी नंबर 1 ने कहा कि उसके पास अपने मामले का समर्थन करने के लिए कोई सबूत नहीं है और इसलिए, शिकायत खारिज कर दी गई; और पार्टियों द्वारा हस्ताक्षरित मध्यस्थता पत्र मध्यस्थ श्री मूर्ति को सौंप दिया गया। इसी प्रकार विवादित मध्यस्थता पार्टियों के बीच समझौता पारित हुआ और श्री मूर्ति को मध्यस्थ नियुक्त किया गया ।

इसके बाद मध्यस्थ ने अपनी कार्यवाही शुरू की और साक्ष्य दर्ज करने के बाद, उन्होंने 14 सितंबर, 1946 को अपना फैसला एकपक्षीय रूप

से सुनाया, उक्त मध्यस्थता कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, अपीलकर्ता ने मध्यस्थ को हटाने के लिए बरहामपुर में अधीनस्थ न्यायाधीश के पास आवेदन कदाचार के आधार पर धारा 5 व 11 मध्यस्थता अधिनियम (1944 का एमजेसी संख्या 34) के तहत पेश किया जो आवेदन खारिज कर दिया गया। इसके बाद अपीलकर्ता ने ट्रायल जज के आदेश के खिलाफ एक पुनरीक्षण आवेदन दायर किया (पुनरीक्षण.याचिका संख्या सीआर 78/1946), लेकिन 26 मार्च, 1949 को उक्त याचिका भी खारिज कर दी गई। 14 सितंबर, 1946 को अवार्ड सुनाया गया।

इस प्रकार अवार्ड सुनाए जाने के बाद, प्रतिवादी नंबर 1 ने धारा 14 व 30 मध्यस्थता एक्ट के तहत 10 दिसंबर, 1946 को बरहामपुर में अधीनस्थ न्यायाधीश को एक आवेदन दिया (एमजेसी नंबर 105, 1946)। अपीलकर्ता ने 14 जनवरी, 1947 को उसी न्यायालय में धारा 33 मध्यस्थता एक्ट के तहत एक आवेदन दायर किया। अवार्ड को रद्द करने के लिए। इन दोनों आवेदनों में, संदर्भ और मध्यस्थ के सभी पक्षों को पक्षकार बनाया गया था। अपने आवेदन के द्वारा, अपीलकर्ता ने कई आधारों पर अवार्ड को रद्द करने का दावा किया, जिनमें से एक यह था कि मध्यस्थता समझौता धारा 23 भारतीय संविदा अधिनियम के तहत अमान्य था। दोनों अदालतों ने इस दलील को खारिज कर दिया है, परिणामस्वरूप, अपीलकर्ता द्वारा दिए गए पंचाट को रद्द करने के आवेदन को खारिज कर दिया गया है और अवार्ड के संदर्भ में डिक्री पारित करने के

लिए प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा किए गए आवेदन को अनुमति दी गई है।दोनों न्यायालयों ने अपीलकर्ता द्वारा उसकी याचिका के समर्थन में उठाए गए अन्य तर्कों पर भी विचार किया और खारिज कर दिया कि पंचाट अमान्य था; लेकिन इन अपीलों के प्रयोजन के लिए, उन्होंने कहा कि निष्कर्षों को संदर्भित करना अनावश्यक है, क्योंकि हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अपीलकर्ता यह तर्क देने में सही है कि मध्यस्थता समझौता भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 23 के तहत अमान्य है।

धारा 23 में प्रावधान है कि प्रत्येक संविदा जिसका उद्देश्य या प्रतिफल गैरकानूनी है, शून्य है और यह बताता है कि एक पर विचार तब तक वैध है जब तक, अन्य बातों के साथ-साथ, यह सार्वजनिक नीति का विरोध नहीं करता है। अभियोजन को दबाने के लिए पार्टियों द्वारा किए गए समझौते को अदालतों द्वारा इस आधार पर लागू नहीं किया जाता है कि ऐसे समझौते पर विचार करना सार्वजनिक नीति के विपरीत है। यदि कोई व्यक्ति आपराधिक कानून की मशीनरी को इस आरोप पर कार्रवाई में लगाता है कि प्रतिद्वंद्वी ने एक गैर-शमनयोग्य अपराध किया है और इस जबरदस्त आपराधिक प्रक्रिया के उपयोग से वह प्रतिद्वंद्वी को एक समझौते में प्रवेश करने के लिए मजबूर करता है, तो उस समझौते को माना जाएगा इस कारण से अमान्य है कि इसका विचार सार्वजनिक नीति के विपरीत है। भारतीय कानून के तहत, अपराधों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है, कुछ पक्षों के बीच संविदा योग्य हैं, कुछ

न्यायालय की अनुमति से समझौता योग्य हैं और कुछ गैर-समझौता योग्य हैं। वर्तमान मामले में, यह सामान्य आधार है कि अपीलकर्ता और अन्य के खिलाफ प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा लगाए गए अपराधों में गैर-शमनयोग्य अपराध शामिल थे, और इसलिए, हम आसानी से निपट रहे हैं, जहां अपीलकर्ता के अनुसार, एक आपराधिक प्रक्रिया गैर-शमनयोग्य अपराधों के संबंध में जारी किया गया था और आपराधिक कार्यवाही को वापस लेना संदर्भ के समझौते के लिए एक विचार था, जिस पर अपीलकर्ता ने अपना हस्ताक्षर किया है। अपीलकर्ता अपना मामला साबित करता है या नहीं, इस पर हम बाद में विचार करेंगे; लेकिन इस बिंदु पर सही कानूनी स्थिति संदेह में नहीं है। यदि यह दिखाया गया है कि मध्यस्थता संविदा के लिए विचार-विमर्श आपराधिक शिकायत की वापसी और गैर-मुकदमा था भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 23 लागू होगी। इस प्रावधान का अंतर्निहित सिद्धांत स्पष्ट है। एक बार जब आपराधिक कानून की मशीनरी इस आरोप पर सक्रिय हो जाती है कि एक गैर-शमनयोग्य अपराध किया गया है, तो उस आरोप से निपटना और यह तय करना अकेले आपराधिक अदालतों और आपराधिक अदालतों पर निर्भर है कि क्या कथित अपराध वास्तव में किया गया है। प्रतिबद्ध है या नहीं. इस प्रश्न का निर्णय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से आपराधिक अदालतों के हाथों से छीनकर निजी व्यक्तियों द्वारा नहीं निपटाया जा सकता है। जब किसी आपराधिक शिकायत पर आगे न बढ़ने के विचार के रूप में एक समझौता किया जाता

है, तो वास्तव में इसका मतलब यह है कि शिकायतकर्ता ने अपनी शिकायत से निपटने के लिए खुद को लिया है और सौदेबाजी काउंटर पर उसने शिकायत के गैर-अभियोजन का उपयोग किया है उस समझौता के लिए प्रतिफल जिसमें उसके प्रतिद्वंद्वी को शामिल होने के लिए प्रेरित या मजबूर किया गया है। जैसा कि मुखर्जी, जे.. ने सुधींद्र कुमार बनाम गणेश चंद्रा में देखा है (1)

> "कोई भी कानून न्यायालय ऐसे समझौते को स्वीकार या प्रभावी नहीं कर सकता है जो कानून के प्रशासन को न्यायाधीशों के हाथों से छीनकर निजी व्यक्तियों के हाथों में सौंपने का प्रयास करता है।"

इसलिए, यह स्पष्ट है कि यदि अपीलकर्ता यह साबित कर देता है कि मध्यस्थता समझौता के लिए प्रतिफल प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा उसकी शिकायत पर मुकदमा न चलाने का वादा था, तो उक्त विचार सार्वजनिक नीति का विरोध करेगा और उस पर आधारित समझौता अमान्य होगा।

इस सिलसिले में प्रिवी काउंसिल के दो निर्णयों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। भवानीपुर बैंकिंग कॉर्पोरेशन लिड बनाम श्रीमती दुर्गेश नंदिनी दासी(2) लॉर्ड एटकिन ने देखा है (1) [1939] आई कलकत्ता।241, 250. (2) एआईआर 1941 पीसी 95। आपराधिक कार्यवाही को त्यागने के वादे के प्रतिफल के रूप में मुआवज़े पर जोर देना निजी अभियोजन के

अधिकार का गंभीर दुरुपयोग है, जो नागरिक आपराधिक कानून को सही ठहराने का प्रस्ताव रखता है, उसे न्याय के हित में पूरे दिल से ऐसा करना चाहिए, और अपना फायदा नहीं उठाना चाहिए।' इस प्रश्न से निपटने में कि क्या के लिए प्रतिफल सार्वजनिक नीति के विपरीत है या नहीं, यह महत्वहीन है कि जिस ऋण के संबंध में अवैध प्रतिफल के लिए संविदा किया गया है वह वास्तविक था, न ही यह आवश्यक है साबित करें कि वास्तव में कोई अपराध किया गया था। ऐसे मामले में साबित करने के लिए बस इतना ही जरूरी है कि

> "प्रत्येक पक्ष को यह समझना चाहिए कि एक पक्ष दूसरे के खिलाफ मुकदमा न चलाने या मुकदमा जारी रखने के वादे के बदले में या आंशिक रूप से अपना वादा कर रहा है"।

उस मामले में, एक बंधक बांड को प्रतिवादी द्वारा 'बंधककर्ता के पति के खिलाफ शुरू की गई आपराधिक कार्यवाही को वापस लेने के बैंक के वादे पर विचार के एक भाग के रूप में निष्पादित किया गया था, और प्रिवी काउंसिल द्वारा यह माना गया था कि बंधक बांड था अमान्य। इस सवाल से निपटने में कि जो ऋण बंधक बांड के लिए प्रतिफल था वह वास्तविक था, उनके आधिपत्य ने देखा कि ऋण के अस्तित्व से कोई फर्क नहीं पड़ा क्योंकि ऋण वास्तविक था या नहीं, बंधक को प्रतिफल के लिए निष्पादित किया गया था जो सार्वजनिक नीति के विपरीत था और इसलिए, यह अवैध और शून्य हो गया।

कामिनी कुमार बसु बनाम वीरेंद्र नाथ बसु, (1) में, उनके आधिपत्य ने माना कि, यदि यह मध्यस्थता के संदर्भ का एक निहित शब्द है, और एक अवार्ड के अनुसार "इकरारनामा" है, तो एक शिकायत एक गैर-शमनीय अपराध है भारतीय दंड संहिता के तहत अपराध किया गया है, उस पर कार्रवाई नहीं की जाएगी, विचार सार्वजनिक नीति के आधार पर गैरकानूनी है, और अवार्ड और ईकरनामा हैं, (1) [1930] एलआर 57 आईए 117।

इसलिए, अप्रवर्तनीय, और यह इस बात की परवाह किए बिना होगा कि कानून में अभियोजन शुरू किया गया है या नहीं। उस मामले में, आपराधिक मामला विवादित समझौते के निष्पादन के अगले दिन वापस ले लिया गया था, लेकिन ऐसा प्रतीत हुआ कि निष्पादन से पहले समझौते के अनुसार, दोनों पक्षों के बीच यह समझ बनी है कि वे अपने-अपने आपराधिक मामलों से पीछे हट जाएंगे। बोर्ड का निर्णय सुनाने वाले सर बिनोद मित्तर ने कहा कि ऐसे मामलों में, यह संभावना नहीं है कि इसे स्पष्ट रूप से एकरारनामे में कहा जाएगा। कि इसके विचार का एक हिस्सा आपराधिक कार्यवाही को निपटाने के लिए एक समझौता था। हालाँकि, यह उन पक्षों के लिए पर्याप्त होगा जिन्होंने समझौते की वैधता पर साक्ष्य देने के लिए आरोप लगाया था, जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि विचार का हिस्सा गैरकानूनी था। यह इन निर्णयों के आलोक में हमें इस प्रश्न पर विचार करना होगा कि क्या अपीलकर्ता यह दिखाने में सफल रहा है कि

वर्तमान मामले में संदर्भ समझौता के लिए प्रतिवादी संख्या-1 द्वारा दायर आपराधिक शिकायत को वापस लेना और गैर-मुकदमा चलाना था।

हम सबसे पहले प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा अपीलकर्ता और अन्य के खिलाफ दायर की गई शिकायत का उल्लेख करेंगे। इस शिकायत में यह आरोप लगाया गया था कि सभी आरोपी व्यक्तियों ने साझेदारी की संपत्ति में प्रतिवादी नंबर 1 के 2 आने के आधे हिस्से को धोखा देने के इरादे से एक-दूसरे के साथ साजिश रची और चावल और तेल मिलों और दोनों की खाता पुस्तकों में बदलाव किया। प्रतिवादी संख्या 1 के नाम के बगल में चौथे प्रतिवादी का नाम डालकर भौतिक भागों में संयुक्त व्यवसाय, ताकि यह प्रतीत हो सके कि 4 थे प्रतिवादी के पास भी प्रतिवादी संख्या 1 के साथ या उसके साथ संयुक्त रूप से दो आने का हिस्सा है। इस आरोप के आधार पर कि प्रतिवादी नंबर 1 ने शिकायत की कि अपीलकर्ता सहित आरोपी व्यक्तियों ने अपराध किया है। 420, 465, 468 और 477 धारा 107 और 120-बी के तहत अपराध किया है । यह सामान्य आधार है कि इस शिकायत पर प्रक्रिया जारी की गई थी और इसे सुनवाई के लिए 30 दिसंबर, 1943 तक के लिए स्थगित कर दिया गया था।

30 दिसंबर, 1943 को पार्टियों द्वारा मध्यस्थता समझौता किया गया था। इस दस्तावेज़ में आठ खंड हैं। इसका उद्देश्य श्री मूर्ति को यह निर्धारित करने के लिए अधिकृत करना था कि क्या 2 आने का हिस्सा विशेष रूप से प्रतिवादी नंबर 1 का है या संयुक्त रूप से उत्तरदाता 1 और

4 का है और इसने उसे साझेदारी के मुनाफे में अपने हिस्से के लिए प्रतिवादी नंबर 1 के दावे के संबंध में आकस्मिक और सहायक मुद्दों को निर्धारित करने के लिए भी अधिकृत किया। समझौते के खंड 5 में प्रावधान है कि मध्यस्थ को यह निर्धारित करना था कि न्याय और अन्याय के अनुसार, बरहामपुर द्वितीय अधिकारी न्यायालय की फाइल पर 1943 के आपराधिक मामले संख्या 139 में दोनों पक्षों द्वारा किए गए खर्च को कौन और किस तरीके से वहन करेगा। दूसरे शब्दों में, मध्यस्थ को न केवल प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा साझेदारी के मुनाफे में दो आने की हिस्सेदारी के दावे के परिणामस्वरूप पार्टियों के बीच के नागरिक विवाद का फैसला करना था, बल्कि आपराधिक कार्यवाही में साझेदारी में खर्चों के बारे में विवाद का भी निर्धारण करना था।

आइए अब उन साक्ष्यों की जांच करें जो उन परिस्थितियों को दर्शाते हैं, जिनके तहत मध्यस्थता समझौते को निष्पादित किया गया था। श्री मूर्ति, जिनकी प्रतिवादी संख्या 1 के लिए जांच की गई है, ने कहा कि उन्होंने निष्पक्ष मसौदे में शामिल होने के लिए कोई शब्द सुझाया नहीं है और वह यह नहीं कह सकते कि मसौदा किसके निर्देश पर लिखा गया था क्योंकि यह उनकी अनुपस्थिति में लिखा गया था। फिर उन्होंने कहा कि पार्टियों ने पहले उन्हें मुचालिका दी और जब वह इसे लेकर लौट रहे थे, तो उन्होंने उनसे कहा कि वे मुचालिका के बारे में आपराधिक अदालत को सूचित करेंगे और उन्हें अदालत के आदेशों के बारे में पता चल जाएगा।

उन्होंने यह भी अनुरोध किया कि वह यह नहीं कह सकते कि क्या पहले प्रतिवादी को इस बात का अंदाजा था कि मुचालिका उसे दिए जाने के बाद वह मामला वापस ले लेगा। मुचालिका को दो गवाहों द्वारा सत्यापित किया गया है और दोनों ने इस मामले में साक्ष्य दिए हैं। प्रमाणित करने वाले दो गवाहों में से एक सीतारमास्वामी हैं। उन्होंने कहा है कि पक्षकार उपजिलाधिकारी न्यायालय के न्यायालय कक्ष में दोपहर करीब एक या दो बजे एकत्र हुए थे, जहां आपराधिक मामले की सुनवाई होने वाली थी. 1 दस्तावेज़ को पार्टियों के बीच लंबित आपराधिक मामले को समाप्त करने के लिए निष्पादित किया गया था। दस्तावेज़ निष्पादित होने के बाद, आपराधिक मामला रद्द कर दिया गया। पहले प्रतिवादी ने निश्चित रूप से कहा कि वह मामला वापस ले लेगा और तदनुसार वह आपराधिक अदालत में गया और मामले को खारिज कर दिया। इसके बाद दस्तावेज़ की मूल प्रति मध्यस्थ को सौंप दी गई। यह महत्वपूर्ण है कि यह गवाह जिसने दस्तावेज़ को सत्यापित किया है, अपीलकर्ता और अन्य के खिलाफ उसके द्वारा दायर आपराधिक मामले में प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा बुलाए गए गवाहों में से एक था और वास्तव में उस दिन साक्ष्य देने के लिए आपराधिक अदालत में आया था। अन्य प्रमाणित गवाह जयचंद्र पाढ़ी का साक्ष्य भी इसी आशय का है। समझौता लिखे जाने और विधिवत निष्पादित होने के बाद, प्रतिवादी नंबर 1 ने आपराधिक अदालत को अपने मामले को साबित करने में असमर्थता के बारे में बताया और तदनुसार

मामले को खारिज कर दिया गया। फिर सभी पक्ष अदालत के बरामदे में एकत्र हुए और अपीलकर्ता ने समझौते की उचित प्रति मध्यस्थ को सौंप दी। इस गवाह के अनुसार, संदर्भ निष्पादित किया गया था ताकि प्रतिवादी नंबर 1 को आपराधिक मामला वापस लेना चाहिए और मध्यस्थता से उनके विवाद का निपटारा होना चाहिए। इस गवाह ने स्पष्ट रूप से कहा कि शर्त यह थी कि आपराधिक मामला वापस लेने के बाद, संदर्भ मध्यस्थ को सौंप दिया जाना था।

अपीलकर्ता द्वारा जांचा गया दूसरा गवाह अप्पा राव है। वह उन परिस्थितियों का उल्लेख करते हैं जिनके तहत मध्यस्थता समझौता निष्पादित किया गया था और कहते हैं कि अपीलकर्ता ने अंतिम मसौदा अपने पास रखा और आपराधिक शिकायत खारिज होने के बाद इसे मध्यस्थ को सौंप दिया। ऐसा प्रतीत होता है कि कदाचार के लिए मध्यस्थ को हटाने के लिए अपीलकर्ता द्वारा शुरू की गई कार्यवाही में अप्पा राव को अपने पूर्व बयान का सामना करना पड़ा। हमें बाद में इस कथन का उल्लेख करने का अवसर मिलेगा।

अपीलकर्ता ने अपने मामले के समर्थन में शपथ पर कहा है कि प्रतिवादी नंबर 1 आपराधिक मामले को वापस लेने और उस पर मुकदमा न चलाने के लिए सहमत हुआ था और यह उस वादे पर विचार करने के लिए था जो मध्यस्थता समझौते में आया था। अपने साक्ष्य में उन्होंने कहा है कि आपराधिक शिकायत दर्ज होने के बाद, साझेदारी की किताबें जब्त

कर ली गईं और संयुक्त व्यवसाय जारी नहीं रहा। उनके अनुसार, श्री मूर्ति ने पेशकश की कि अगर उन्हें कोई संदर्भ दिया जाए तो वे समझौता कर लेंगे और मामला वापस ले लेंगे। यही वह समय था जब दोनों पक्षों के वकीलों ने समझौते का मसौदा तैयार किया। फिर गवाह ने बताया कि कैसे प्रतिवादी नंबर: 1 अदालत में गया और कहा कि वह अपना मामला साबित करने में असमर्थ है, जिसके बाद शिकायत खारिज कर दी गई, फिर पार्टियां सामने आईं और समझौता श्री मूर्ति को सौंप दिया गया। इस गवाह के साक्ष्य से स्पष्ट है कि समझौता उसके द्वारा निष्पादित किया गया था क्योंकि उससे वादा किया गया था कि यदि वह समझौते को निष्पादित करेगा तो आपराधिक मामला हटा दिया जाएगा। यह अपीलकर्ता द्वारा अपने मामले के समर्थन में प्रस्तुत किया गया साक्ष्य है कि समझौते पर विचार प्रतिवादी नंबर 1 का वादा था कि वह अपने मामले पर मुकदमा नहीं चलाएगा और वास्तव में वादा पूरा होने के बाद दस्तावेज़ मध्यस्थ को सौंप दिया गया था। प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा और आपराधिक मामला खारिज कर दिया गया।

प्रतिवादी नंबर 1 ने अपने साक्ष्य में इसके विपरीत कोई स्पष्ट बयान नहीं दिया है। उसने अपीलकर्ता और उसके गवाहों द्वारा बताई गई परिस्थितियों को स्वीकार कर लिया है कि समझौता कहां, कब और कैसे निष्पादित हुआ। उन्होंने केवल इतना कहा कि वह यह नहीं कह सकते कि संबंधित मध्यस्थ के संदर्भ की बात मामले को खारिज करने से पहले या

बाद में उठी थी। वह स्वीकार करता है कि उसने आपराधिक अदालत में अपना मामला साबित करने में असमर्थता जताई है और फिर मध्यस्थ ने मध्यस्थता शुरू कर दी है।

इस प्रकार यह देखा जाएगा कि अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य ठोस, सांख्यिकीय और स्पष्ट है, जबकि प्रतिवादी नंबर 1 और उसके द्वारा जांचे गए मध्यस्थ के साक्ष्य स्पष्ट नहीं हैं और सबसे अच्छे रूप में अस्पष्ट हैं। यहां तक कि, प्रतिवादी नंबर 1 और मध्यस्थ के अनुसार, आपराधिक मामला वापस लेने से ठीक पहले आपराधिक अदालत के परिसर में समझौते का मसौदा तैयार किया गया था। दूसरे शब्दों में, वह स्थान जहां समझौता तैयार किया गया था और जिस समय इसे तैयार किया गया था, महत्वपूर्ण हैं। यह ज्ञात था कि आपराधिक मामले की सुनवाई 30 दिसंबर, 1943 की दोपहर को होगी, और इसलिए, घटनाओं का क्रम स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि पार्टियों ने एक समझ में प्रवेश किया था, जिसका सार यह था कि प्रतिवादी नंबर 1 को प्राप्त करना था। आपराधिक मामला खारिज कर दिया गया और उस पर विचार के रूप में, अपीलकर्ता और अन्य आरोपी व्यक्तियों को अपने विवाद को श्री मूर्ति की मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने के लिए सहमत होना पड़ा।इस संबंध में, यह बहुत महत्वपूर्ण है कि अंतिम मसौदा जिसे निष्पादित और सत्यापित किया गया था, आपराधिक मामला वापस लेने के बाद मध्यस्थ को सौंप दिया गया था। इसलिए, दस्तावेज़ के निष्पादन से संबंधित परिस्थितियाँ और साक्ष्य

में प्रकट घटनाओं का क्रम स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि प्रतिवादी नंबर 1 का आपराधिक मामला वापस लेने और मुकदमा न चलाने का वादा एक विचार था जिसके लिए अपीलकर्ता और उसके दोस्तों ने इसमें प्रवेश किया था। मध्यस्थता समझौता। यह ऐसा मामला नहीं है जहां यह उचित रूप से कहा जा सके कि आपराधिक मामले को वापस लेने का एक मकसद हो सकता है, न कि विवादित लेनदेन पर विचार करना।

फिर समझौते की क्लॉज संख्या 5 अपीलकर्ता के मामले की पुष्टि करती है कि आपराधिक शिकायत को वापस लेना और गैर-मुकदमा चलाना मध्यस्थता समझौते के लिए एक विचार था।इसीलिए मध्यस्थ को यह निर्णय लेने के लिए अधिकृत किया गया कि आपराधिक कार्यवाही में होने वाले खर्च को कौन और किस तरीके से वहन करेगा। इस प्रकार आपराधिक कार्यवाही और उनकी वापसी का मध्यस्थता समझौते के साथ घनिष्ठ संबंध स्पष्ट रूप से स्थापित होता है। यह एक अन्य कारक है जो अपीलकर्ता के मामले का समर्थन करता है।

हालाँकि, प्रतिवादी नंबर 1 के लिए श्री एमएसके शास्त्री द्वारा आग्रह किया गया है कि समझौता इसलिए किया गया क्योंकि श्री मूर्ति ने पार्टियों के बीच विवादों को निपटाने की पेशकश की थी और पार्टियों ने उनकी सलाह स्वीकार कर ली थी। ऐसा प्रतीत होता है कि श्री मूर्ति आपराधिक मामले में अपीलकर्ता के लिए आपराधिक अदालत में उसकी उचित उपस्थिति के लिए ज़मानत देने के लिए खड़े हुए थे, जब भी मामला

सुनवाई के लिए तय किया गया था और श्री शास्त्री अपीलकर्ता द्वारा दिए गए बयान पर भरोसा करते हैं जो श्री मूर्ति ने पेश किया था। यदि उसे कोई सन्दर्भ दिया गया तो वह समझौता कर ले और मामला वापस ले ले। तर्क यह है कि पूरी घटना श्री मूर्ति के सुझाव पर हुई थी और इसलिए, यह तर्क देने की कोई गुंजाइश नहीं हो सकती है कि प्रतिवादी नंबर 1 ने मध्यस्थता समझौते के निष्पादन के लिए आपराधिक मामले को वापस लेने का वादा किया था। इस तर्क को स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि श्री मूर्ति स्वयं यह स्वीकार नहीं करते हैं कि उन्होंने मध्यस्थता की पेशकश की थी और पार्टियों ने उनकी सलाह स्वीकार कर ली थी। श्रीमान के अनुसार जब समझौता लिखा गया था तब मुर्ति उपस्थित नहीं थे और वास्तव में वह नहीं जानते कि समझौते की सामग्री किसने तय की थी। लेकिन इस विचार के अलावा, यहां तक कि अपीलकर्ता द्वारा दिया गया बयान जिस पर तर्क आधारित है, यह दर्शाता है कि प्रस्ताव स्पष्ट था- आपराधिक मामले को 'वापस लेना होगा और मुकदमा नहीं चलाना होगा और संदर्भ का समझौता करना होगा। ये दोनों चरण कारण और प्रभाव के रूप में एक दूसरे से संबंधित थे, या एक कदम था या विचार और दूसरा था मध्यस्थता समझौते में प्रवेश करने के प्रस्ताव की स्वीकृति। इसलिए, हम नहीं देखते कि अपीलकर्ता के इस तर्क को खारिज करना कैसे संभव होगा कि मध्यस्थता समझौते के लिए प्रतिवादी नंबर 1 का वादा था कि वह अपनी आपराधिक शिकायत पर मुकदमा नहीं चलाएगा।

यह सच है कि निचली अदालत और उच्च न्यायालय दोनों ने अपीलकर्ता के तर्क को खारिज कर दिया है और आम तौर पर यह अदालत नीचे की दोनों अदालतों द्वारा इस तरह के मुद्दे पर किए गए समवर्ती निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने के लिए अनिच्छुक है। लेकिन इस मामले में, उच्च न्यायालय के फैसले से पता चलता है कि दुर्भाग्य से उच्च न्यायालय ने इस मुद्दे से संबंधित प्रासंगिक साक्ष्य पर विचार नहीं किया है। इसका निष्कर्ष मुख्यतः दो बातों पर आधारित है। इसने अपीलकर्ता की इस बात पर ध्यान न देने के लिए आलोचना की है कि जब अपीलकर्ता ने अपनी याचिका एमजेसी 34 ऑफ़ 1944 द्वारा मध्यस्थ को हटाने के लिए आवेदन किया था, और इसलिए, उच्च न्यायालय ने यह विचार किया कि वर्तमान याचिका पर बहुत देर से निर्णय लिया गया था। हमारी राय में, यह आलोचना उचित नहीं है। अपीलकर्ता मध्यस्थता अधिनियम के कुछ प्रावधानों के तहत किसी अन्य कार्यवाही द्वारा इस याचिका को ले सकता था या नहीं यह अलग बात है। लेकिन मध्यस्थ को उसके कदाचार के आधार पर हटाने के लिए दिए गए आवेदन में इस बिंदु को न लेने के लिए अपीलकर्ता में दोष निकालना गलत होगा। यदि अपीलकर्ता ने अपने कदाचार के आधार पर मध्यस्थ को हटाने की मांग की है,तो उस संदर्भ में यह आरोप लगाना प्रासंगिक या महत्वपूर्ण नहीं होगा कि मध्यस्थता समझौता स्वयं अमान्य था। किसी भी मामले में, 'पहले की कार्यवाही में अपीलकर्ता द्वारा इस बिंदु को अन्यथा लेने में विफलता, इसके समर्थन में

अपीलकर्ता द्वारा दिए गए सबूतों की योग्यता पर विचार किए बिना बिंदु की अस्वीकृति को उचित नहीं ठहराएगी और उच्च न्यायालय ने इस मामले में वास्तव में यही करने का इरादा किया है।

अन्य विचार जिसने उच्च न्यायालय को प्रभावित किया है वह इस तथ्य से आगे बढ़ा है कि वर्तमान कार्यवाही में अपीलकर्ता द्वारा जांच की गई अप्पा राव ने कार्यवाही में कहा था जिसे अपीलकर्ता ने मध्यस्थ को हटाने के लिए अपने आवेदन द्वारा लिया था कि प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा आपराधिक मामले में गवाही देने के बाद, मध्यस्थता का संदर्भ दिया गया था, और उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से सोचा था कि अप्पा राव का यह पूर्व बयान ऐसा है अपीलकर्ता और उसके गवाहों द्वारा स्थापित वर्तमान संस्करण के साथ पूरी तरह से असंगत है कि केवल इसी कारण से इसे खारिज कर दिया जाना चाहिए। यह दृष्टिकोण स्पष्टतः ग़लत है। पिछली कार्यवाही में अप्पा राव ने जो कहा वह वर्तमान कार्यवाही में उनके साक्ष्य के साथ-साथ अपीलकर्ता और उनके अन्य गवाहों द्वारा दिए गए साक्ष्य से पूरी तरह मेल खाता है। कानून में और वास्तव में संदर्भ तभी दिया गया था जब विधिवत निष्पादित मध्यस्थता समझौते को मध्यस्थ को सौंप दिया गया था और यह आपराधिक मामला खारिज होने के बाद हुआ था। अब भी अपीलकर्ता का यही कहना है। यह अपीलकर्ता के संस्करण के दूसरे भाग के साथ असंगत नहीं है जो मध्यस्थता समझौते के प्रारूपण से पहले पक्षों के बीच हुई बातचीत, मसौदे की तैयारी और उसके अंतिम तल्लीनता

से संबंधित है, जो कि आपराधिक मामला समाप्त होने से पहले हुआ था। अपीलकर्ता के सभी गवाहों ने कहा है कि मसौदा मध्यस्थ को दिखाया गया था, लेकिन आपराधिक मामला खारिज होने के बाद अंतिम समझौता उसे दिया गया था। इस प्रकार, उच्च न्यायालय ने अप्पा राव द्वारा पेश की गई वर्तमान कहानी और उनके पिछले बयान के बीच एक गंभीर असंगतता के बारे में जो सोचा, वह किसी भी तरह की असंगति नहीं है। यह खेदजनक है कि उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले बाकी सबूतों की सावधानीपूर्वक जांच नहीं की कि अपीलकर्ता ने धारा 23 भारतीय संविदा अधिनियम के तहत मध्यस्थता समझौते की वैधता को चुनौती दी है। कायम नहीं रखा जा सका. उच्च न्यायालय के फैसले में इस कमज़ोरी के कारण ही हमने स्वयं साक्ष्यों की जाँच करना आवश्यक समझा। हमारी राय में, उक्त साक्ष्य स्पष्ट रूप से अपीलकर्ता के मामले का समर्थन करते हैं और इसलिए, यह माना जाना चाहिए कि 30 दिसंबर,1943 को पार्टियों द्वारा निष्पादित मध्यस्थता समझौता धारा 23 के तहत अमान्य है। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 23, क्योंकि इसका विचार सार्वजनिक नीति के विपरीत था।

परिणाम यह है कि, दो अपीलें स्वीकार की जाती हैं पंचाट के संदर्भ में डिक्री पारित करने के लिए प्रतिवादी संख्या 1 (1946 का एमजेसी 105) द्वारा किया गया आवेदन खारिज कर दिया जाता है और अपीलकर्ता (1947 का एमजेसी संख्या 8) द्वारा किया गया आवेदन खारिज कर दिया

जाता है। पंचाट को अलग रखने की अनुमति है। अपीलकर्ता प्रतिवादी नंबर 1 से अपनी लागत पाने का हकदार होगा। सुनवाई शुल्क का एक सेट.

अपील स्वीकार

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी कानाराम मीणा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।